National Journal of Multidisciplinary Research and Development
ISSN: 2455-9040
Impact Factor: RJIF 5.22
www.nationaljournals.com
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 890-892

आन्तरिक–आपात्काल : प्रेस एवं संवैधानिक संशोधन तथा मूल अधिकार

डॉ० रणवीर सिंह ठाकुर
अतिथि व्याख्याता, राजनीति विज्ञान एवं लोकप्रशासन विभाग, डॉ0 हरीसिंह गौर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, सागर, मध्य प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

25 जून 1975 से 21 मार्च 1977 के दौरान लागू आन्तरिक–आपात्काल में सरकार को 'प्रेस की स्वतंत्रता' पर गंभीर आघात पहुँचाया था जो प्रेस पर सेंसरशिप के रूप में था। अखबार सरकार के विरूद्ध किसी भी प्रकार का समाचार नहीं छाप सकते थे। प्रेस को सरकारी नीतियों के समर्थन में ही कुछ प्रकाशित करने का अधिकार था। रेडियो तथा टेलीविजन सरकार के मुखबिर बन गए। पत्रकारों तथा बुद्धिजीवियों ने इंदिरा गाँधी तथा संजय गाँधी की प्रशंसा के पुल बाँधना प्रारंभ कर दिया। इस प्रकार प्रेस की स्वतंत्रता समाप्त हो गई। 25 जून को कुछ अखबारों ने अपने संपादकीय खाली छोड़ दिए या उन्हें काला कर दिया जाता था। 25 जून की ही रात्रि में आपात्काल की घोषणा के पूर्व भी सरकार ने दिल्ली के समाचार पत्रों के प्रेस की विधुत आपूर्ति काट दी थी तथा अनेकों शहरों से प्रकाशित होने वाले समाचार–पत्रों के कार्यालयों पर छापा मारकर एक प्रकार का सेंसरशिप लागू कर दिया था जिससे लोग उस रात्रि में किये गए विपक्षी राजनीतिक नेताओं की सामूहिक गिरफ्तारी तथा सरकार की अन्य कार्यवाहियों के बारे में दूसरे दिन जानकारी प्राप्त न कर सकें।[1] सरकार ने प्रेस को निर्देश दिए थे कि वे ऐसा कोई भी समाचार प्रकाशित न करें जिससे सरकार के प्रति जनता में उदासीनता पैदा हो अथवा सरकार की प्रतिष्ठा पर आघात् पहुँचे। साथ ही ऐसे समाचारों को रोकने के निर्देश भी दिए गए जिनसे सरकार विरोधी जनसभाओं के प्रारंभ होने का खतरा या आशंका हो या जनता में सरकार के प्रति असंतोष उत्पन्न होने की संभावना हो।

संसद की कार्यवाहियों तथा राज्यों में विधानमंडलों की कार्यवाहियों को बिना सेन्सर, तथा अनापत्ति प्रमाण पत्र के प्रकाशन पर पूर्ण प्रतिबंध लगा दिया गया साथ ही न्यायालयों की कार्यवाहियों और नागरिक स्वतंत्रताओं से सम्बन्धित न्यायालयों के निर्णयों के प्रकाशन पर भी प्रतिबंध लगा दिया गया, यदि कोई समाचार पत्र सरकार के सेन्सर निर्देशों की अवहेलना करता था तो समाचार प्रकाशित होने के पूर्व ही उस समाचार पत्र को पृष्ठ–दर–पृष्ठ सेंसर के दौर से गुजरना पड़ता था और इस प्रकार से उसे अनावश्यक रूप से उत्पीड़ित किया जाता था। इसका उद्देश्य था कि जनता को सरकार की निरंकुश गतिविधियों की जानकारी प्राप्त न हो और सरकार अपने विरूद्ध जन आंदोलनों से बची रहे।[2]

सूचना एवं प्रसारण मंत्री, श्री विद्याचरण शुक्ल ने 28 जून, 1975 को दिल्ली में समाचार पत्रों को यह चेतावनी दी कि यदि वे अपने समाचारों को सेंसर नहीं कराते हैं तो उन्हें देश से निष्कासित कर दिया जावेगा। उनकी इस चेतावनी के परिणामस्वरूप, बी.बी.सी. लंदन को 23 जुलाई, 1975 को नयी घोषणाओं को अमान्य करार देते हुए दिल्ली से अपने कार्यालयों को बंद कर दिया। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका की सूचना एजेन्सी ने भी 12 अगस्त, 1975 को 'वायस ऑफ अमेरिका' के संवाददाताओं को वापिस बुला लेने की धमकी देते हुए कहा कि सरकार द्वारा आरोपित कठोर परिस्थितियों को वह स्वीकार नहीं कर सकती है।[3]

आपात्काल में सरकार ने समाचार एजेंसियों को आघात् पहुँचाते हुए 'प्रेस–काउँसिल' को जो अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के संरक्षक के रूप में कार्य कर रही थी को भंग कर दिया[4] और उसकी जगह पर समाचार की चार विभिन्न एजेन्सियों – पी.टी.आई., यू.एन.आई., हिन्दुस्तान समाचार तथा समाचार भारती के अलग–अलग अस्तित्व को समाप्त कर उसकी जगह पर एक नयी एजेन्सी ''समाचार'' का गठन कर दिया गया। इस कार्यवाही से देश में भय का वातावरण व्याप्त हो गया। यहाँ तक कि न्यायालयों के निर्णयों के प्रकाशनों पर भी प्रतिबंध लग गया। विदेशी समाचार माध्यमों पर लगे सेंसर का गंभीर विरोध हुआ तब मजबूरी में सरकार को बाध्य होकर विदेशी प्रेस की स्वतंत्रता बहाल करनी पड़ी।[5]

आंतरिक आपात्काल के दौरान नागरिकों की सम्पत्ति के मूल अधिकारों के नियमन से सम्बन्धित एक अन्य कानून के विधायन के लिए विधेयक तैयार किया गया, जिसे शहरी भूमि (सीलिंग एवं नियमन) विधेयक 1976 के नाम दिया गया।[6] यह विधेयक लोकसभा में 2 फरवरी एवं राज्यसभा में 5 फरवरी 1976 को पारित होकर अधिनियम बना। इसमें विहित प्रावधानों के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति के लिए शहर में अपने नाम से जमीन रखने की अधिकतम सीमा निर्धारित की गई जिसके अनुसार दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता एवं चेन्नई में प्रति व्यक्ति के लिए 500 वर्ग मीटर, हैदराबाद, पूना, अहमदाबाद, बैंगलोर और कानपुर में 1000 मीटर, तीन लाख से 10 लाख तक की आबादी वाले 35 शहरों में 1500 वर्ग मीटर तथा 29 ऐसे शहरों में जहाँ जनसंख्या 2 से 3 लाख थी 2000 वर्ग मीटर अधिकतम जमीन रखने की सीमा निर्धारित की गई इसके अतिरिक्त जमीन का मुआवजा देकर जमीन सरकार द्वारा अधिगृहीत किये जाने की व्यवस्था भी अधिनियम के माध्यम से सुनिश्चित कर दी गई।

संवैधानिक संशोधन तथा मूल अधिकार

आन्तरिक आपात्काल की घोषणा के दौरान 38वाँ संविधान संशोधन अधिनियम 1975 पारित किया गया। इस संविधान संशोधन का उद्देश्य विपक्षी नेताओं, सांसदों, विधायकों आदि को निरंकुश तरीके से निरूद्ध करने हेतु वैधानिकता प्रदान करना था। इस संविधान संशोधन के पूर्व तक राष्ट्रपति, अनुच्छेद 359 के अंतर्गत विहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए आपात्काल में मूल अधिकारों के प्रवर्तन के लिये मात्र न्यायालय में समावेदन करने के अधिकार को ही निलम्बित कर सकता था परन्तु 38वें संविधान संशोधन ने उसे यह शक्ति प्रदान कर दी जिसका प्रयोग करके वह आपात्काल में संविधान के भाग तीन में वर्णित् किसी या सभी अधिकारों को

निलम्बित कर सकता है। इस संशोधन के माध्यम से अनुच्छेद 359 में एक नया खण्ड 359(1–क) जोड़ा गया जिसके अनुसार आपात्काल के दौरान, जहाँ अनुच्छेद 359(1–क) के अधीन भाग तीन में वर्णित किसी अधिकार के निलम्बन की घोषणा प्रवर्तन में हो, राज्य के द्वारा कोई कानून बनाने या कार्यपालिका द्वारा कार्यवाहियाँ करने की शक्ति को विस्तारित किया गया तथा ऐसे किसी विधायन या कार्यवाहियों को भाग तीन में विहित मूल अधिकारों द्वारा निर्बन्धनों से मुक्त कर दिया।[7]

अनुच्छेद 359(1–क) उपबंधित करता है कि ''जब (अनुच्छेद 20 और 21 छोड़कर) भाग तीन द्वारा प्रदत्त किन्हीं अधिकारों को उल्लिखित करने वाला खंड (1) के अधीन किया गया आदेश प्रवर्तन में है तब उस भाग में उन अधिकारों को प्रदान करने वाली कोई बात उस भाग में यथा परिभाषित राज्य की कोई ऐसी विधि बनाने की या कोई ऐसी कार्यपालिका कार्यवाही करने की शक्ति को, जिसे वह राज्य उस भाग में अंतर्विष्ट उपबंधों के अभाव में बनाने या करने के लिये सक्षम होता, निर्बन्धित नहीं करेगी, किन्तु इस प्रकार बनायी गई कोई विधि पूर्वोक्त आदेश के प्रवर्तन में न रहने पर अक्षमता की मात्रा तक उन बातों के सिवाय तुरन्त प्रभावहीन हो जायेगी जिन्हें विधि के इस प्रकार प्रभावहीन होने के पहले किया गया है या करने का लोप किया गया है।

सन् 1976 में ही संसद ने एक दूसरा महत्वपूर्ण संवैधानिक संशोधन पारित किया जिसे 42वाँ संविधान संशोधन कहा जाता है। इसका मुख्य उद्देश्य संसद की सर्वोच्चता स्थापित करना और संविधान को संशोधित करने के संसद के वैधानिक अधिकार को स्वीकार करना था। इस हेतु संविधान के अनुच्छेद 368 में एक नया खण्ड 368(4) जोड़कर यह उपबंधित किया गया कि, ''इस संविधान का (भाग तीन) इस अनुच्छेद के अधीन संविधान के 42वें संविधान संशोधन अधिनियम 1976 की धारा 55 के प्रारंभ से पहले या उसके पश्चात् किया गया या किया गया तात्पर्थित हो ऐसा कोई संशोधन किसी न्यायालय में किसी भी आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जावेगा। इसी संशोधन के द्वारा मूल अधिकारों को नीति–निदेशक तत्वों की अपेक्षा गौण स्वरूप प्रदान करने का प्रयास भी किया गया।[8]

42वें संविधान संशोधन अधिनियम में राष्ट्र विरोधी गतिविधियों और संगठनों पर रोक लगाने के उद्देश्य से संविधान में एक नयी धारा 31–डी जोड़ी गई। इसमें उपबंधित था कि इसके अंतर्गत बनाये जाने वाले कानून को मूल अधिकारों के उल्लंघन के नाम पर अवैधानिक घोषित नहीं किया जा सकता था। यहाँ तक कि संविधान के अनुच्छेद 14, 19 और 31 से प्राप्त मूल अधिकारों के उल्लंघन के आधार पर भी ऐसे कानूनों को चुनौती नहीं दी जा सकती थी। संशोधन में राष्ट्र विरोधी गतिविधियों एवं संगठनों की परिभाषा व्यापक ढ़ंग से की गयी। संशोधन में किसी व्यक्ति या संघ की भिन्न गतिविधियों को राष्ट्र विरोधी बतलाया गया।[9]

1. जो भारत के किसी भाग को किसी आधार पर देश से अलग होने को उकसाता है, या ऐसा आशय रखता है।
2. जो भारत की सम्प्रभुता, अखण्डता, सुरक्षा एवं एकता के विरोध में दावा करता है, चुनौती देता है, धमकी देता है, छिन्न–भिन्न करता है या इस आशय से कोई कदम उठाता है।
3. जो विधि द्वारा स्थापित सरकार को उलटने का इरादा रखते हों, या इस तरह की योजना बनाते हों।
4. जो आन्तरिक उपद्रव करना तथा लोक सेवाओं को छिन्न–विच्छिन्न करने का इरादा रखते हों, या किसी ऐसी स्कीम का भाग हो जो इस प्रकार का उपद्रव करने का इरादा रखते हो।

राष्ट्र विरोधी संगठन ऐसे संगठन को कहा गया है :–

1. जिसका उद्देश्य राष्ट्र विरोधी कार्य करना हो।
2. जो किसी व्यक्ति को राष्ट्र विरोधी कार्य करने के लिए उसको उत्साहित करता हो या उसकी सहायता करता हो।
3. जिसके सदस्य राष्ट्र विरोधी कार्य करते हों या उसमें संलग्न हों।

42वें संविधान संशोधन का यह अनुच्छेद सर्वाधिक विवादास्पद रहा क्योंकि इसके प्रावधानों के अंतर्गत विरोधी दलों एवं व्यक्तियों के प्रतिशोध लेने की व्यवस्था कर रहा था। इसमें राष्ट्र विरोधी गतिविधियों को स्पष्ट करते हुए आशयित (Inutendate) शब्द का प्रयोग किया गया था जिसका अर्थ था कि किसी को भी कानून के दायरे में लाने के लिये इतना काफी है कि उन व्यक्तियों का संगठनों ने ऐसा करने के कारण, उन्होंने ऐसा कुछ किया है या नहीं, यह सिद्ध करना आवश्यक नहीं है। कोई भी कार्यक्रम, प्रदर्शन या हड़ताल जिसे सरकार पसंद न करें या जो उसके लिए असुविधाजनक हो तब सरकार उसे उपरोक्त परिभाषा के अंतर्गत राष्ट्र विरोधी घोषित कर सकती है तथा सरकार ऐसे आयोजकों को दण्डित भी कर सकती है। इस संशोधन का सबसे बड़ा दोष यह था कि 'सरकार और राष्ट्र' दोनों को ही एक मानकर सरकार विरोधी गतिविधि को राष्ट्र विरोधी गतिविधि के अन्तर्गत परिभाषित करने का प्रयास किया गया। इस संशोधन से शासन को सत्ता की शक्तियों के दुरूपयोग करने का व्यापक अधिकार मिल गया था अतः 43वें संविधान संशोधन के द्वारा उपर्युक्त संशोधन रद्द कर दिया गया।

42वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा ही संविधान के भाग तीन (अनुच्छेद 32) में जहाँ संवैधानिक उपचारों के अधिकार, में भी मौलिक परिवर्तन करने और इस माध्यम से उच्चतम न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों के अधिकारों को सीमित करने का प्रयास किया गया। इस हेतु एक नयी उपधारा 32(4) जोड़ी गई जिसके द्वारा उपबंधित किया गया कि उच्चतम न्यायालय तब तक किसी राज्य द्वारा बनाये गये कानूनों की वैधता की जाँच नहीं करेगा जब तक कि उसके साथ किसी केन्द्रीय कानून का मामला न जुड़ा हो।[10] इस प्रकार इस अधिनियम के द्वारा संसद में राज्य द्वारा बनायी गयी विधियों से मूल अधिकारों के अतिक्रमण के विरूद्ध, नागरिकों को उच्चतम न्यायालय की शरण लेने से वंचित कर दिया गया परन्तु बाद में 43वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा इस नयी उपधारा (32– ।) को समाप्त कर दिया गया।[11]

इस प्रकार 25 जून 1975 की मध्यरात्रि को देश में पहली बार राष्ट्रपति को अनुच्छेद 352 के अन्तर्गत विहित शक्तियों का प्रयोग करते हुए देश की आन्तरिक सुरक्षा के नाम पर आपात् स्थिति की घोषणा की किन्तु 19 महीनों की अवधि के दौरान सत्तारूढ़ दल ने 'मीसा' एवं 'डी.आई.आर.' के प्रावधानों के आवरण में सभी प्रमुख विरोधी दलों के नेताओं, ट्रेड यूनियन के आंदोलनों से संबंधित व्यक्तियों एवं ऐसे सभी लोगों को जिनसे सरकार को खतरा हो सकता था बिना कोई कारण बताये निरूद्ध कर दिया।[12] प्रेस की स्वतंत्रता वांछित कर दी गई, लोगों को उनके मूल अधिकारों से वंचित कर दिया गया जिससे देश का लोकतांत्रिक स्वरूप अधिनायक तंत्र में परिवर्तित हो गया।

38वें एवं 39वें संविधान संशोधन के माध्यम से भी नागरिकों के मूल अधिकारों पर गंभीर आघात् पहुँचाये गये और न्यायपालिका की पवित्रता को नष्ट करने का प्रयास किया गया यहाँ तक कि 'संवैधानिक उपचारों' के अधिकार में जो भी संशोधन करके उच्चतम

न्यायालय की उपचार प्रदान करने की शक्ति को सीमित करने का प्रयास किया गया इस प्रकार आन्तरिक आपात्काल के 19 महीने अनुशासन, कार्य–संस्कृति की स्थापना एवं विकास के संदर्भ में चाहे उत्कृष्ट रहे हों परन्तु नागरिकों के मूल अधिकारों के हनन संवैधानिक उपचारों के अधिकार की अवमानना होने,[13] न्यायपालिका की स्वतंत्रता, पवित्रता एवं न्यायप्रियता को नष्ट करने के दृष्टिकोण से यह कार्यकाल भारत के राजनीतिज्ञ इतिहास का 'काला–कार्यकाल' कहलाएगा।

संदर्भ

1. 1978 में अनुच्छेद 352 के संशोधन किए जाने से अब आन्तरिक अशांति के आधार पर आपात् की घोषणा की जा सकती है जो सशस्त्र विद्रोह न हो।
2. हैण्डरसन, माइकेल; एक्सेपरीमेन्ट विड अनटूथ, न्यू देहली, 1977, पृष्ठ 3।
3. किंसिग्स कॉन्टेम्परी आर्काख्स, 1975, पृष्ठ 273–68।
4. अय्यर, एस.पी. एण्ड शार : एस.वी., इण्डियाज वैलेट बाल्स रिवॉल्यूशन, बॉम्बे, 1978, पृष्ठ 77।
5. नैयर, कुलदीप डी जजमेन्ट, न्यू देहली, 1977, पृष्ठ 34।
6. ए.आई.आर. 1975 एस.सी. 1597।
7. अय्यर एम.पी.एण्ड शार, एस.वी. इण्डियन बैटेट बाक्स, रिवॉल्यूशन, बाम्बे, 1978, पृष्ठ 81।
8. नैयर, कुलदीप, डी जजमेन्ट, न्यू देहली, 1977, पृष्ठ 41।
9. 26 जून 1975 को प्रधानमंत्री का राष्ट्र के नाम प्रसारण।
10. 27 जून 1975 को प्रधानमंत्री का राष्ट्र के नाम प्रसारण।
11. हैण्डरसन माइकेल, एक्सपेरीमेन्ट विड अनट्रुथ, 1977, पृष्ठ 6।
12. टाइम्स ऑफ इंडिया, लखनऊ, 15 जुलाई, 1985।
13. हैण्डरसन माइकेल, एक्सपेरीमेन्ट विड अनट्रुथ, 1977, पृष्ठ 6।